देवेन्द्र कुमार सिंह

बनाम

प्रशासक, बिहार सहकारी विपणन संघ लिमिटेड एवं अन्य

25 अप्रैल, 2006

[एस. बी. सिन्हा एवं पी. पी. नाओलेकर, न्यायमूर्तिगण]

सेवा विधि :

सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम—कर्मचारियों को वेतन का भुगतान—वेतन के भुगतान से इंकार—अभिनिर्धारित : यदि राज्य अपने संवैधानिक दायित्वों का निर्वहन करने में विफल रहता है, तो उसका यह दायित्व है कि वह ऐसे उपयुक्त उपाय करे, जिससे कर्मचारी अपने वेतन प्राप्त करने के विधिसम्मत अधिकार से वंचित न हो। समान प्रश्न से संबंधित एक वाद में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों के अनुसार नियोजक संस्था के बंद किए जाने तक कर्मचारी को वेतन का भुगतान किए जाने संबंधी विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश को निरस्त करके उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने त्रुटि की।—भारत का संविधान, 1950—अनुच्छेद 12।

भारत का संविधान, अनुच्छेद 226 :

उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता—अभिनिर्धारित : इसका विस्तार नहीं किया जा सकता। यदि इस संबंध में कोई कारण-ए-दावा उत्पन्न होता है, तो कर्मचारी को अपने अभ्यावेदनों का निराकरण कराने हेतु सक्षम मंच के समक्ष जाने की स्वतंत्रता होगी।

अपीलकर्ता, जो बिहार राज्य सहकारी विपणन संघ लिमिटेड (बिस्कोमान) का एक कर्मचारी था, को जनवरी, 1996 से वेतन का भुगतान नहीं किया गया था। इस कारण उसने पटना उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की। उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अपने दिनांक 27.09.2000 के आदेश द्वारा नियोजक को अपीलकर्ता के वेतन का भुगतान करने का निर्देश दिया। उक्त आदेश से व्यथित होकर नियोजक ने उसके विरुद्ध लेटर्स पेटेंट अपील प्रस्तुत की, जिसे उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने स्वीकार करते हुए विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश को अपास्त कर दिया। फलतः वर्तमान अपील प्रस्तुत की गई है।

अपील स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया : 1.1. अपीलकर्ता-कर्मचारी के वेतन प्राप्त करने के विधिसम्मत अधिकार का कोई विवाद नहीं है। ऐसा आदेश, जिसका क्रियान्वयन सहज रूप से संभव न हो, और किसी विधिसम्मत अधिकार की घोषणा—दोनों परस्पर भिन्न एवं पृथक विषय हैं। रिट जारी करते समय न्यायालय का यह सरोकार नहीं होता कि सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम तथा बिहार राज्य के मध्य उनके पारस्परिक दायित्व के संबंध में कोई अंतर्विवाद विद्यमान है या नहीं। [284-जी]

1.2. उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश का यह अभिमत पूर्णतः सही था कि यदि भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ में कोई राज्य अपने संवैधानिक दायित्वों का निर्वहन करने की स्थिति में नहीं है, तो उसका यह दायित्व है कि वह स्वयं उपयुक्त उपाय खोजे तथा इस संबंध में आवश्यक कदम उठाए; किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि अपीलकर्ता को वेतन प्राप्त करने के उसके विधिसम्मत अधिकार से वंचित कर दिया जाए। [284-झ; 285-क]

कपिला हिंगोरानी बनाम बिहार राज्य, **[2003] 6 उच्चतम न्यायालय वाद-पत्र 1—संदर्भित।**

1.3. रिट याचिका के परिक्षेत्र का विस्तार नहीं किया जा सकता। यदि इस संबंध में कोई वाद-हेतु उत्पन्न होता है, तो संबंधित कर्मचारियों के लिए यह खुला रहेगा कि वे अपने अभ्यावेदनों के निवारण हेतु सक्षम मंच का आश्रय लें। उपर्युक्त कारणों के आलोक में उच्च न्यायालय की खंडपीठ का निर्णय पूर्णतः असंधार्य है; अतः उसे अपास्त किया जाता है। [285-ई]

दीवानी अपीलीय अधिकारिता : 2002 की दीवानी अपील सं. 7659।

पटना उच्च न्यायालय द्वारा 2001 के लेटर्स पेटेंट अपील सं. 401 में दिनांक 19.07.2001 को पारित निर्णय एवं अंतिम आदेश के विरुद्ध।

अपीलकर्ता की ओर से : सुनील कुमार, अनीता कानूनगो तथा हिमांशु शेखर।

प्रत्यर्थियों की ओर से : दिनेश द्विवेदी, कैलाश वासदेव, एस. के. सिन्हा, ऋतु रास बिस्वास, गोपाल सिंह तथा बी. बी. सिंह (अनुपस्थित)।

न्यायालय का निर्णय निम्नलिखित द्वारा प्रदान किया गया—

एस. बी. सिन्हा, न्यायमूर्ति— वर्तमान अपीलकर्ता बिहार राज्य सहकारी विपणन संघ लिमिटेड (संक्षेप में 'बिस्कोमान') का कर्मचारी है। उसे जनवरी, 1996 से वेतन का भुगतान नहीं किया गया। इस कारण उसने पटना उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की। उसके वेतन प्राप्त करने के विधिसम्मत अधिकार अथवा वेतन की देय राशि के संबंध में कोई विवाद नहीं उठाया गया। उक्त

आधार पर उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अपने दिनांक 27.09.2000 के आदेश द्वारा अपीलकर्ता को वेतन का भुगतान करने का निर्देश देते हुए निम्नलिखित अभिमत व्यक्त किया—

> "यह न्यायालय यह उल्लेख करने के लिए विवश है कि यह निर्विवाद है कि प्रत्यर्थी अक्तूबर, 1995 से अपने कर्मचारियों को वेतन तक का भुगतान करने की स्थिति में नहीं हैं। ऐसी संस्था अथवा संगठन का अस्तित्व बना नहीं रहना चाहिए। मेरे मत में, इस न्यायालय की पूर्णपीठ द्वारा *मणिकांत पाठक एवं अन्य बनाम बिहार राज्य,* (1997) (1) पटना विधि निर्णयिका 664, के वाद में प्रतिपादित निर्णय के आलोक में ऐसी समस्त संस्थाओं एवं संगठनों को परिसमापन की कार्यवाही आरंभ करके तत्काल बंद कर दिया जाना चाहिए।
>
> किन्तु प्रत्युत्तर-शपथपत्र में यह संकेत तक नहीं दिया गया है कि अब तक इस प्रकार का कोई कदम उठाया गया है।फलतः यह रिट याचिका 2,000/- (दो हजार रुपये) व्यय सहित स्वीकार की जाती है। उक्त व्यय की राशि संगठन के प्रधान, अर्थात् प्रशासक, अपने निजी संसाधनों से याचिकाकर्ता को अदा करेंगे तथा याचिकाकर्ता के समस्त बकाया देयकों का भुगतान इस आदेश की सूचना प्राप्त होने की तिथि से दो सप्ताह के भीतर करेंगे। ऐसा न करने की स्थिति में, आदेश का अनुपालन होने तक वे स्वयं अपने वेतन एवं अन्य भत्तों का आहरण नहीं करेंगे।"

बिस्कोमान ने उक्त निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध लेटर्स पेटेंट अपील प्रस्तुत की। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने अपने दिनांक 19.07.2001 के आदेश द्वारा विद्वान् एकल न्यायाधीश के उक्त निर्णय एवं आदेश को अपास्त करते हुए निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया—

> "बिस्कोमान निरंतर घाटे में संचालित हो रहा है। उसके पास दैनिक व्यय की पूर्ति हेतु भी कोई निधि उपलब्ध नहीं है तथा उसके कर्मचारियों को वेतन का भुगतान भी नहीं किया जा रहा है। यहाँ तक कि प्रशासक की नियुक्ति भी अंशकालिक आधार पर की गई है। जहाँ तक इस प्रश्न का संबंध है कि राज्य सरकार उक्त समिति के परिसमापन के लिए आवश्यक कदम उठाएगी अथवा नहीं, यह निर्णय करना उसी का विषय है। केवल इस आधार पर प्रत्यर्थी सं. 1 को वेतन का भुगतान करने का निर्देश नहीं दिया जा सकता, क्योंकि यह निर्विवाद स्थिति है कि बिस्कोमान के पास कोई निधि उपलब्ध नहीं है। अतः ऐसा कोई रिटा आदेश जारी नहीं किया जा सकता, जिसका पालन किया जाना ही संभव न हो। परिणामस्वरूप, विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा वेतन के भुगतान के संबंध में दिया गया निर्देश तथा प्रशासक के विरुद्ध अधिरोपित व्ययादेश अपास्त किए जाते हैं। तथापि, यह

स्पष्ट किया जाता है कि जैसे ही निधि उपलब्ध होगी, प्रत्यर्थी तथा अन्य कर्मचारियों को उनका वेतन अदा कर दिया जाएगा।"

इसी कारण अपीलकर्ता ने वर्तमान अपील प्रस्तुत की है।

हम खंडपीठ द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण का अनुमोदन नहीं करते। कोई नागरिक जिस अनुतोष का वह विधिसम्मत रूप से अधिकारी है, उसे प्राप्त करने के लिए उच्च न्यायालय के द्वार पर उपस्थित होता है। वर्तमान प्रकरण में अपीलकर्ता के वेतन प्राप्त करने के विधिसम्मत अधिकार का कोई विवाद नहीं है। ऐसा आदेश, जिसका क्रियान्वयन सहज रूप से संभव न हो, और किसी विधिसम्मत अधिकार की घोषणा—दोनों परस्पर भिन्न एवं पृथक विषय हैं। रिट जारी करते समय न्यायालय का यह सरोकार नहीं होता कि बिस्कोमान और बिहार राज्य के मध्य उनके पारस्परिक दायित्व के संबंध में कोई अंतर्विवाद विद्यमान है या नहीं।

हमारे मत में विद्वान् एकल न्यायाधीश का यह अभिमत पूर्णतः सही था कि यदि भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ में कोई राज्य अपने संवैधानिक दायित्वों का निर्वहन करने की स्थिति में नहीं है, तो उसका यह दायित्व है कि वह स्वयं उपयुक्त उपाय खोजे तथा इस संबंध में आवश्यक कदम उठाए; किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि अपीलकर्ता को वेतन प्राप्त करने के उसके विधिसम्मत अधिकार से वंचित कर दिया जाए।

तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने अपने दिनांक 29.04.2002 के आदेश द्वारा बिहार राज्य को बिस्कोमान के कर्मचारियों को एक-एक वर्ष का वेतन अदा करने का निर्देश दिया था।

किन्तु बिहार राज्य ने बिस्कोमान के कर्मचारियों को वेतन का भुगतान करने के अपने दायित्व का प्रतिषेध एवं विवाद किया है।

श्री सुनील कुमार ने आग्रह किया कि यह न्यायालय बिहार राज्य को बिस्कोमान के सभी कर्मचारियों का वेतन अदा करने के लिए उपयुक्त निर्देश जारी करे। हम इस प्रार्थना को एक से अधिक कारणों से स्वीकार नहीं कर सकते। प्रथम, इसलिए कि ऐसा कोई प्रकरण नहीं है जिसमें इस न्यायालय के समक्ष ऐसे सामान्य निर्देश जारी करने के लिए आवश्यक सामग्री उपलब्ध हो। द्वितीय, बिस्कोमान के कर्मचारियों द्वारा ऐसा कोई प्रकरण प्रस्तुत नहीं किया गया है, जिससे इस न्यायालय द्वारा *कपिला हिंगोरानी बनाम बिहार राज्य,* [2003] 6 उच्चतम न्यायालय वाद-पत्र 1 में प्रतिपादित विधि का अनुप्रयोग आकर्षित हो।

इस परिस्थिति में हम रिट याचिका के परिक्षेत्र का विस्तार करना उचित नहीं समझते। यदि इस संबंध में कोई वाद-हेतु उत्पन्न होता है, तो संबंधित कर्मचारियों के लिए यह खुला रहेगा कि वे अपने अभ्यावेदनों के निवारण हेतु सक्षम मंच का आश्रय लें। तथापि, उपर्युक्त कारणों से हमारा मत है कि उच्च न्यायालय की खंडपीठ का निर्णय पूर्णतः असंधार्य है। अतः उसे अपास्त किया जाता है। अपील स्वीकार की जाती है। प्रत्यर्थी सं. 2 इस अपील का व्यय भी वहन करेगा। अधिवक्ता-शुल्क ₹5,000/- (पाँच हजार रुपये) निर्धारित किया जाता है।

एस.के.एस अपील स्वीकार की गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।